छत्तीसगढ़ी भाषा : स्वरूप और संभावनाएँ

डॉ. चित्त रंजन कर

डॉ. सुधीर शर्मा

वैभव प्रकाशन

रायपुर

दो शब्द

जिस प्रकार आज छत्तीसगढ़ हमारे राष्ट्र में अपनी अलग पहचान बनाता जा रहा है, उसी प्रकार छत्तीसगढ़ी भी हमारे अपेक्षा-जगत् में अपनी अस्मिता की रश्मियाँ अभिवर्धन के साथ प्रसारित करती जा रही है। छत्तीसगढ़ी के प्रति प्रेम और निष्ठा इस के आसन को नित नए रत्नों से विभूषित कर रही है।

डॉ. चित्त रंजन कर और डॉ. सुधीर शर्मा छत्तीसगढ़ी के भाषिक यान के संवाहकों में पर्याप्त आगे की पंक्ति में अपना स्थान बना चुके हैं - हरदम बढ़ते रहने की लगन के कारण। इन के दुवारा तैयार किया गया यह सुमरनी-गुटका जिज्ञासुओं और प्रबुद्धजन पर निश्चित रूप से गहरा रंग छोड़ेगा।

डगनिया,
रायपुर - 492 013

रमेश चंद्र महरोत्रा
8.3.2000

0. प्रस्तावना -

पारंपरिक दृष्टि से भाषा-विशेष की अनेक बोलियों की धारणा इतनी दृढ़मूल हो गई है कि आज 'भाषा' और 'बोली' ने अपनी समानार्थकता मानो खो दी हो और नए अर्थ ओढ़ लिए हों। यही नहीं, 'भाषा' को 'बोली' की अपेक्षा प्रतिष्ठा भी अधिक प्राप्त है। डॉ. रवींद्रनाथ श्रीवास्तव (1994 : 37) का कथन इस संदर्भ में विचारणीय है :-

1. "अपने सामाजिक प्रकार्य में भाषा स्वनिष्ठ और स्वायत्त होती है। अपनी प्रकृति में वह अध्यारोपित (superordinate) है। इस के विपरीत, बोली अपनी प्रकृति में पदावलंबी एवं आश्रित (subordinate) होती है। इसीलिए हम कह सकते हैं कि (हिंदी) भाषा की निम्नलिखित बोलियाँ हैं, यह नहीं कह सकते कि इन बोलियों की भाषा हिंदी है।
2. भाषा का व्यवहार-क्षेत्र व्यापक होता है, जबकि बोली का सीमित।
3. भाषा-बोली-भेद के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि अपनी बोलियों की तुलना में भाषा सापेक्षतया अधिक विकसित एवं परिनिष्ठित होती है।"

स्पष्टत: भाषा और बोली के बीच भेद का आधार भाषावैज्ञानिक न हो कर समाजभाषावैज्ञानिक है, जिस में राजनीति, प्रशासन, आदि का हस्तक्षेप निहित होता है।

हमारे मतानुसार

1. हिंदी खड़ी बोली से प्रारंभ हो कर आज बहुत बड़े क्षेत्र में बोली जाती है, जिस का तात्पर्य यह हुआ कि भाषा से बोली नहीं, बोली से ही भाषा बनती है।[0]
2. हिंदी के व्यवहृत भेदों की रूपरेखा प्रस्तुत करें, तो विदित होगा कि वह भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न बोलियों/भाषाओं से प्रभावित हो कर ही चरितार्थ होती है, जैसे - बंगाली-हिंदी, पंजाबी-हिंदी, मराठी-हिंदी, तेलुगु-हिंदी, उड़िया-हिंदी, गुजराती-हिंदी, आदि।
3. भाषा मूलत: समाज की संप्रेषण-व्यवस्था की व्यापकता को भी आत्समात करने वाला शब्द है, तो दूसरी ओर, सस्यूर के शब्दों में, वह अमूर्त व्यवस्था है, जो भाषाभाषियों के मस्तिष्क में होती है, जिस का व्यक्त-व्यवहृत रूप 'वाक्' है। तदनुसार, बोली की व्यवहार्यता स्वत: सिद्ध है।

[0] द्रष्टव्य, चित्त रंजन कर, 1999 : 99-100.

1. इतिवृत्त -

भाषा और साहित्य सहगामी होते हैं, क्योंकि कवि या लेखक सामान्यतः बोलचाल की भाषा में ही काव्य-रचना करते हैं। छत्तीसगढ़ी का विकास अभिलेखीय प्रमाणों एवं उपलब्ध साहित्य के आधार पर अर्धमागधी प्राकृत/अपभ्रंश से ईसा की 15 वीं-16 वीं शताब्दी से माना जा सकता है, जिस का प्रयोग वर्तमान में छत्तीसगढ़ के अतिरिक्त समीपवर्ती उड़ीसा (संबलपुर), महाराष्ट्र (भंडारा, चाँदा), बिहार (छोटा नागपुर), असम के चाय-बाग़ों में, तथा मध्यप्रदेश के बालाघाट और मंडला ज़िलों के कुछ भागों में होता है। वर्तमान में छत्तीसगढ़ी भाषियों की बहुलता देश के बड़े-बड़े शहरों में पाई जाने लगी है, यथा- दिल्ली, भोपाल, जमशेदपुर, बोकारो, धनबाद, नागपुर, बंबई, इलाहाबाद, बनारस, भुवनेश्वर, लखनऊ आदि ,जहाँ शासकीय, अर्धशासकीय, अशासकीय प्रतिष्ठानों में काम करने वाले छत्तीसगढ़ी-भाषियों की बड़ी-छोटी बस्तियाँ भी बनने लगी हैं।

2. छत्तीसगढ़ी का वर्तमान स्वरूप -

"कोस-कोस मे पानी बदले, चार कोस मे बानी" वाली कहावत को चरितार्थ करते हुए कहा जा सकता है कि छत्तीसगढ़ी के छत्तीस रूप हैं, जिस के कारण भौगोलिक एवं सामाजिक दोनों हैं। समीपवर्ती अन्य भाषाओं अथवा बोलियों से प्रभावित होने के कारण भिन्न-भिन्न क्षेत्रों की छत्तीसगढ़ी में किंचित् भिन्नता आ जाना स्वाभाविक है, जिस से संप्रेषण में बाधा नगण्य है।

प्रो. रमेश चंद्र महरोत्रा ने सभी उपलब्ध रूपों [1] का युक्तियुक्त विवेचन कर के छत्तीसगढ़ी का भौगोलिक वर्गीकरण निम्नानुसार किया है :-

(1) केन्द्रीय छत्तीसगढ़ी (मूल छत्तीसगढ़ी) : (अकारादि क्रम से) -

क़वर्धाई, काँकेरी, खैरागढ़ी, गोरो, गौरिया, डँगचगहा, देवरिया (देवार), धमदी (धमधी), नाँदगाँही, पारधी, बहेलिया, बिलासपुरी, बैगानी, रतनपुरी, रायपुरी, शिकारी, सतनामी।

---

[1] छत्तीसगढ़ी की विभिन्न उपबोलियों/क्षेत्रीय रूपों का विवेचन भिन्न-भिन्न विद्वानों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से किया है - द्र. भालचंद्र राव तेलंग (1966), कांतिकुमार जैन (1969), प्यारे लाल गुप्त (1973),शंकर शेष (1973), नरेंद्रदेव वर्मा (1979), व्यासनारायण दुबे (1984),आदि

(2) पश्चिमी छत्तीसगढ़ी-

कमारी, खल्टाही, पनकी, मरारी।

(3) उत्तरी छत्तीसगढ़ी -

नागवंशी, पंडो, सदरी-कोरबा, सरगुजिया।

(4) पूर्वी छत्तीसगढ़ी -

कलंगा, कलंजिया, चमारी, बिंझवारी, भूलिया।

(5) दक्षिणी छत्तीसगढ़ी -

अड़कुरी, चंदारी, जोगी, धाकड़, नाहटी, बस्तरी (बस्तरिया), मिरगानी, मेहरी (मुहारी), हलबी।

उपर्युक्त पाँचों वर्गों की छत्तीसगढ़ी का पर्यालोचम करने पर ज्ञात होता है कि केंद्रीय छत्तीसगढ़ी के जातीय/स्थानीय भेद-प्रभेद तो हैं, परंतु यह बाह्य प्रभाव से उतनी आच्छादित नहीं है, जितनी अन्य वर्गों की छत्तीसगढ़ी, यथा - बुंदेली-मराठी से प्रभावित पश्चिमी छत्तीसगढ़ी; बघेली, भोजपुरी, अथवा कुरुख से प्रभावित उत्तरी छत्तीसगढ़ी; उड़िया से प्रभावित पूर्वी छत्तीसगढ़ी; तथा मराठी, गोंडी, अथवा उड़िया से प्रभावित दक्षिणी छत्तीसगढ़ी।

प्रकृत या जीवित भाषा को बाह्य प्रभाव से मुक्त कर पाना सर्वथा असंभव है। अतः छत्तीसगढ़ी के किसी भी वर्ग को बाह्य प्रभाव-मुक्त सिद्ध करना उस की व्यवहार्यता, वास्तविकता, तथा व्यापनशीलता पर प्रश्नचिन्ह लगाना होगा।

3. मानकीकरण -

'मानकीकरण वैविध्य में एकता ढूँढने का प्रयास है (रवींद्रनाथ श्रीवास्तव, 1994:199)। तात्पर्य यह है कि प्रकृत भाषा अपने व्यवहार में विषमरूपी होती है, जिस में 'एकता' ढूँढने का 'प्रयास' मात्र किया जा सकता है, उसे 'निर्दिष्ट' या 'आरोपित' नहीं किया जा सकता। यह भी ध्यातव्य है कि मानकीकरण का वास्तविक स्वरूप लेखन में

चरितार्थ होता है, ब़ोलने या उच्चारण में नहीं। 'मानकीकरण' अर्थात् जो मानक नहीं है, उसे मानक बनाना, जिस का अभिप्राय किसी भाषा के विभिन्न रूपों तथा शैलियों में से किसी एक का स्वीकरण और अन्य का निरस्तीकरण कदापि नहीं होता, वरन् सर्वसमावेशी अभिरचना के आधार पर प्राप्त रूपों का सामान्यीकरण किया जाता है, जिन में लचीलापन, मितव्ययिता, एवं एकरूपता हो।

इस दृष्टि से छत्तीसगढ़ी के वर्तमान मानक स्वरूप को निम्नानुसार उदाहृत किया जा सकता है :-

4. ध्वनिप्रक्रिया -

छत्तीसगढ़ी में 5 ह्रस्व स्वर हैं - अ,इ,उ,ऍ, ओ॑

5 दीर्घस्वर हैं - आ, ई, ऊ, ए, ओ

2 संध्यक्षर हैं - ऐ, औ

इन स्वरों के अनुनासिक रूप भी मिलते हैं।

डॉ. नरेंद्र देव वर्मा (1979 :127) के अनुसार छत्तीसगढ़ी 'ऐ' और 'औ' केवल संध्यक्षर के रूप में प्रयुक्त होते हैं। उन्होने 'ऐ' के दो रूप 'अए' और 'अइ' तथा 'औ' के भी दो रूप 'अओ' और 'अउ' बताए हैं। वस्तुतः 'ऐ' के दो रूप ∂ε और ∂I हैं, जिन में पहला आरोही संध्यक्षर है, तथा दूसरा सम-संध्यक्षर है। इसी प्रकार , 'औ' के दो रूप ∂ɔ तथा ∂U हैं, जिन में पहला आरोही तथा दूसरा सम-संध्यक्षर है।

दीर्घता -

स्वरों में अतिरिक्त दीर्घता से अर्थगत एवं व्याकरणगत अंतर परिलक्षित होता है,

यथा - में जाऽथौं। (मैं जा रहा हूँ।)

में जाथौं। (मैं जाता हूँ।)

व्यंजन 35 हैं :

क्	ख्	ग्	घ्	ङ्	
च्	छ्	ज्	झ्		
ट्	ठ्	ड्	ढ्	ड़्	ढ़्
त्	थ्	द्	ध्	न्	न्ह्

प्	फ्	ब्	भ्	म्	म्ह्
य्	र्	र्ह्	ल्	ल्ह्	व्
स्	ह्				

व्यंजनों का द्वित्वीकरण भी होता है, जैसे - लद्दी, खड्डा, पट्टा, जम्मा, रद्दा, कर्रा, आदि।

रूपप्रक्रिया -

1. संज्ञा

(क) लिंग -

लिंग-भेद संज्ञाओं में होता है, परंतु वह व्याकरणिक नहीं, अर्थात्मक है। जीवधारियों में पुल्लिंग-स्त्रीलिंग का भेद है। निर्जीव संज्ञाओं के पुल्लिंग-स्त्रीलिंग भेद की उपयोगिता छत्तीसगढ़ी में नहीं प्रतीत होती।

छत्तीसगढ़ी की कुछ संज्ञाएँ केवल पुल्लिंग होती हैं तथा कुछ केवल स्त्रीलिंग। कुछ संज्ञाएँ उभयलिंगों में भी प्रयुक्त होती हैं। इन के अतिरिक्त, पुल्लिंग संज्ञाओं को छत्तीसगढ़ी के स्त्रीलिंग-प्रत्ययों से युक्त करके स्त्रीलिंग बनाया जाता है। डॉ. नरेंद्र देव वर्मा (1979:213) के अनुसार आकारांत संज्ञाएँ प्रायः पुल्लिंग होती हैं-चाँटा, घोड़ा, बोकरा, आदि।

ईकारांत संज्ञाएँ प्रायः स्त्रीलिंग होती हैं - चाँटी, घोड़ी, बोकरी, छेरी।

पुल्लिंग से स्त्रीलिंग बनाने के लिए सामान्यतः पुल्लिंग शब्द (प्रातिपदिक) के आगे -'ई' (भतीजा-भतीजी, डौका-डौकी), '-इन' (तेली-तेलिन, सुनार-सुनारिन), '-इया' (बुढ़वा-बुढ़िया, बछवा-बछिया), '-निन' (हाथी-हथनिन, देवार-देवारनिन), '-आनी' (देवर-देवरानी-देरानी), '-आइन' (गुरु -गुरुवाइन, पंडित-पंडिताइन), आदि प्रत्यय लगाए जाते हैं।

छत्तीसगढ़ी में कतिपय शब्द ऐसे हैं, जो केवल स्त्रीलिंगवाची होते हैं - सती, गाभिन, टोनही, पंचालिन, छँड़वे, छिनार, बरांडी, राँड़ी, बिहई, बेसुआ, परगोतरी, सउत, चरकट्टी, आदि।

कुछ संज्ञा-शब्दों के स्वतंत्र पुल्लिंग-स्त्रीलिंग युग्म होते हैं :-

ददा-दाई, बाप-माँ, बाबू-नोनी, ससुर-सास, भाँटो-दीदी, बइला-गाय, देवर-ननद, भाई-भउजी, आदि।

कुछ संज्ञा-शब्दों के पूर्व लिंगद्योतन के लिए पुल्लिंग एवं स्त्रीलिंगवाची प्रत्यय लगाया जाता है :-

नरगुड़ेला	- माई गुड़ेला
एंडरा भालू	- एंडरी भालू
डौका कीरा	- डौकी कीरा
नर चिरई	- माई चिरई
(नर) कोकड़ा	- माई कोकड़ा

छत्तीसगढ़ी में कतिपय संज्ञाएँ उभयलिंगी होती हैं - जेंवरिया, गियाँ, परानी, मनखे, लगवार, संगी, आदि।

छत्तीसगढ़ी में लिंग-भेद से संबोधन-पदों में भेद पाया जाता है :-

(1) समवयस्क पुरुष आपस में 'एजी, एगा, गा' आदि का प्रयोग करते हैं।

(2) समवयस्क स्त्रियाँ आपस में 'एया, रे' का प्रयोग करती हैं।

(3) आदरणीय पुरुष के लिए स्त्री 'हौ/हा/ह जी' का प्रयोग करती है।

(4) बच्चे आदरणीय पुरुष के लिए 'हौ/हा/ह गो' का प्रयोग करते हैं। कहीं-कहीं 'गो' के स्थान पर 'गा' का प्रयोग भी मिलता है।

(5) आदरणीय स्त्री के लिए 'ह ओ' (हौ ओ) या 'ए ओ' तथा कहीं-कहीं 'ए गो' का प्रयोग किया जाता है।

(6) छोटों के लिए नाम के आगे ' रे ' का प्रयोग होता है।

(ख) वचन -

छत्तीसगढ़ी संज्ञाओं के बहुवचनात्मक रूपों में मुख्यतः 'मन' प्रत्यय मिलता है- 'लइका मन', 'छेरी मन', 'रूख मन'। इसके अलावा बहुलतावाची विशेषणों के पूर्व

प्रयोग से भी बहुवचन का द्योतन होता है - सब्बो /अब्बड़/जम्मो/जमा/बड़ अकन मनखे / आमा / टूरा। इन में 'मन' भी जुड़ कर आता है - सब्बो मनखे मन।

संज्ञा-विशेष के द्वित्व से भी बहुवचन का द्योतन होता है :-

छेरीच छेरी, लइकेच लइका।

2. सर्वनाम -

छत्तीसगढ़ी में जहाँ संज्ञा का मूल रूप सर्वत्र प्रयुक्त होता है, वहाँ सर्वनाम मूल एवं विकारी दोनों रूपों में प्रयुक्त होता है, :-

पुरुषवाचक -

	एकवचन	बहुवचन
मूल	में, तें, ओ	हम/हमन, तुम/तुमन, ओ/ओमन
विकारी	मोर, तोर, ओकर	हमर, तुँहर, ओमन के /ओंखर
	मोला, तोला, ओला	हमन ला, तुमन ला/तुँहला, ओमन ला
	मोर ले, तोर ले, ओकर	हमर ले, तुँहर ले, ओमन (करा) ले
	मोर बर, तोर बर, ओकर बर	हमर बर, तुँहर बर, ओमन बर
	मोर मा, तोर मा, ओकर मा	हमर मा, तुँहर मा, ओमन माँ

निश्चयवाचक -

	एकवचन	बहुवचन
मूल	ए, ओ	एमन, ओमन
विकारी	एकर, ओकर	एमन के, ओमन के
	एला, ओला	एमन ला, ओमन ला
	एकर ले, ओकर ले	एमन ले, ओमन ले
	एकर बर, ओकर बर	एमन बर, ओमन बर
	एकर मेर, ओकर मेर	एमन मा, ओमन मा

प्रश्नवाचक -

	एकवचन	बहुवचन का-का
मूल	कौन, का	कौन मन/कौन-कौन
विकारी	काकर	कौन मन के
	कौन ला, का ला	कौन मन ला
	काकर ले	कौन मन ले
	काकर बर	कौन मन बर
	काकर मेर	कौन मन मा

संबंधवाचक -

एकवचन	बहुवचन
जे, ते	जेमन, तेमन
जेकर, तेकर	जेमन के, तेमन के
जेला, तेला	जेमन ला, तेमन ला
जेकर ले, तेकर ले	जेमन ले, तेमन ले
जेकर बर, तेकर बर	जेमन बर, तेमन बर
जेकर मेर,तेकर मेर	जेमन मा, तेमन मा

निजवाचक -

एकवचन	बहुवचन
अपन, अपन ला	अपन मन, अपन मन ला
अपन ले	अपन मन ले
अपन बर, अपन मा	अपन मन बर, अपन मन मा

3. विशेषण-

छत्तीसगढ़ी में कुछ विशेषण लिंग से सदैव अपरिवर्तित रहते हैं तथा कुछ परिवर्तित,
जैसे - सुग्घर नोनी/बाबू, दुब्बर डौका/डौकी

करिया घोड़ा	-	कारी घोड़ी
छोटका बाबू	-	छोटकी नोनी
मँझला बाबू	-	मँझली नोनी
बुधियार डोकरा	-	बुधियारिन डोकरी

चघैया, गवैया, सुतैया, आदि कृदंत-विशेषण, ऐसन, ओइसन, जैसन, कैसन, तैसन, अतका, ओतका, जेतका, तेतका, कतका, आदि सार्वनामिक विशेषण छत्तीसगढ़ी में प्रयुक्त होते हैं।

4. क्रिया -

छत्तीसगढ़ी में क्रियाएँ चार प्रकार की हैं :-

सरल	-	खा, पी, देख, सुन, आदि।
यौगिक	-	खा ले, कर डार, सुन पार, आदि।
मिश्र	-	गारी बक, जर (बुख़ार) आ, आदि।
नाम धातु	-	दुबरा, मोंटा, सबना, आदि।

ये क्रियाएँ काल, पक्ष, वृत्ति, वाच्य, पुरुष, और वचन के अनुसार परिवर्तित होती हैं।

(क) काल और पक्ष -

छत्तीसगढ़ी में काल और पक्ष चार-चार हैं (द्रष्टव्य- महरोत्रा एवं कर, 2986) :

	काल	पक्ष
शून्य	X	ϕ
वर्तमान	$\sqrt{}$ ह्	- त्
भूत	$\sqrt{}$ रह्	- य्, -इ
भविष्य	$\sqrt{}$ ह्, ब्	- इ, - य्

शून्य काल -

छत्तीसगढ़ी में शून्यकाल के अंतर्गत शून्य पक्ष, वर्तमान पक्ष, एवं भूतपक्ष की रचनाएँ मिलती हैं,यथा -

	पुरुष	एकवचन	बहुवचन
शून्य पक्ष -शून्य काल	उत्तम	में जाँव	हमन जान
	मध्यम	तें जा	तुमन जाव
	अन्य	ओ जाय	ओमन जाँय
वर्तमान पक्ष-शून्य काल	पुरुष	एकवचन	बहुवचन
	उत्तम	में जातें	हमन जातेन
	मध्यम	तें जाते	तुमन जातेव
	अन्य	ओ जातिस	ओमन जातिन
भूत पक्ष-शून्य काल	पुरुष	एकवचन	बहुवचन
	उत्तम	में गें	हमन गेन
	मध्यम	तें गे/ गेस	तुमन गेव
	अन्य	ओ गिस	ओमन गिन

वर्तमान काल -

छत्तीसगढ़ी में वर्तमान काल में वर्तमान, भूत एवं भविष्य पक्ष की रचनाएँ मिलती हैं :-

वर्तमान पक्ष- वर्तमान काल -	पुरुष	एकवचन	बहुवचन
	उत्तम	में जाथौं	हमन जाथन
	मध्यम	तें जाथस	तुमन जाथौ
	अन्य	ओ जाथे	ओमन जाथें

भूत पक्ष-वर्तमान काल	पुरुष	एकवचन	बहुवचन
	उत्तम	में गे हौं	हमन गे हन
	मध्यम	तें गे हस	तुमन गे हौ
	अन्य	ओ गे हे	ओमन गिन हें

भविष्य पक्ष- वर्तमान काल

हमन ला
तोला
तुमन ला
ओला
ओमन ला
— जाय बर हे।

भूत काल -

छत्तीसगढ़ी में भूत काल के अंतर्गत भूत पक्ष, वर्तमान पक्ष, एवं भविष्य पक्ष की रचनाएँ प्रयुक्त होती हैं : -

भूतपक्ष-भूतकाल	पुरुष	एकवचन	बहुवचन
	उत्तम	में गे रहें	हमन गे रहेन
	मध्यम	तें गे रहे	तुमन गे रहेव
	अन्य	ओ गे रहिस	ओमन गे रहिन
वर्तमान पक्ष-भूत काल	**पुरुष**	**एकवचन**	**बहुवचन**
	उत्तम	में जात रहें	हमन जात रहेन
	मध्यम	तें जात रहे	तुमन जात रहेव
	अन्य	ओ जात रहिस	ओमन जात रहिन

भविष्य पक्ष-भूत काल

मोला / हमन ला
तोला / तुमन ला
ओला / ओमन ला
— जाय बर रहिस।

भविष्य काल -

छत्तीसगढ़ी में भविष्य काल के अंतर्गत केवल दो प्रकार की रचनाएँ मिलती हैं- शून्य पक्ष और भविष्य पक्ष।

शून्य पक्ष- भविष्यकाल	**पुरुष**	**एकवचन**	**बहुवचन**
	उत्तम	में जाहौं	हमन जाबो
	मध्यम	तें जाबे	तुमन जाहौ
	अन्य	ओ जाही	ओमन जाहीं

भविष्य पक्ष-भविष्य काल

मोला / हमन ला
तोला/ तुमन ला — जाय बर होही।[0]
ओला/ ओमन ला

(ख) वृत्ति -

'वृत्ति' का तात्पर्य वक्ता की मनोदशा है, जो भाषा में शब्द-विशेष या वाक्य प्रकार द्वारा व्यक्त होती है। छत्तीसगढ़ी में शब्द-विशेष से व्यक्त होने वाली वृत्तियाँ निम्नानुसार हैं :-

निषेध	-	नइ, झन
अवधारणा	-	च, घलो, ओ , हूँ, ऊँ
निश्चय	-	ह (कर्तृपरक), ठन (निर्जीव), झन (सजीव)
प्रश्न	-	काबर, कहाँ, काकर, कतका, आदि

वाक्य-प्रकारों से वृत्ति का दूयोतन निम्नानुसार होता है :-

आज्ञा	-	तें जा।

[0] 'मो ला जाना हे /खाना हे - जैसे वाक्यों में 'जाना/खाना' क्रियारूप स्पष्टतया हिंदी के हैं। क्रियार्थक संज्ञा के लिए छत्तीसगढ़ी में जवइ, खवइ, पियइ, देखब, सुनब, आदि रूप मिलते हैं।

इच्छा	-	में जातें।
निश्चय/सामान्यता	-	लइका ह दिन-रात पढ़थे।
सातत्य	-	में जाऽथौं / जात हौं।
अनिवार्यता	-	मोला घर जाय बर हे।
संभाव्यता	-	हमन एक ठन फटफटी बिसैया हन।
अनिच्छा	-	जाय बर जाहौं, फेर (तोर काम ह होही कि नइ, कौन जानी)

(ग) वाच्य एवं प्रयोग -

छत्तीसगढ़ी में क्रिया का 'वाच्य' कर्तृ, कर्म, भाव, कर्मकर्तृ, एवं प्रेरणार्थक होता है, जब कि प्रयोग की दृष्टि से कर्तरि, भावे, एवं कर्मकर्तेरि प्रयोग मिलते हैं। (द्रष्टव्य - कर, 1993)

कर्तृवाच्य-कर्तरि प्रयोग -	में ह किताब पढ़ें।
	हमन मेला देखे बर जातेन।
कर्तृवाच्य-भावे प्रयोग -	मोला अब्बड़ बूता करे बर हे।
	तुमन ला कहाँ जाय बर हे।
कर्मवाच्य-कर्मणि प्रयोग -	जोन होही, देखे जाही।
	मंदिर म भागवत पढ़े गिस।
भाववाच्य-भावे प्रयोग •-	बुढ़वा बैला ले रेंगे नइ जाय।
	उपर चढ़े नइ जाय।

• छत्तीसगढ़ी में कर्मवाच्य और भाववाच्य के वाक्यों का प्रयोग विरलता से होता है। संभवतः यह हिंदी के प्रभाव से साहित्य लेखन में प्रचलित हुआ है (रामानुज शर्मा, 1994)। भाववाच्य में 'बुढ़वा बैला ले चलत नइ बने,' 'उपर चढ़त नइ बने' - जैसे वाक्य ज़्यादा स्वाभाविक प्रतीत होते हैं।

कर्मकर्तृवाच्य-कर्मतर्करि प्रयोग -

कर्मवाच्य और भाववाच्य की तुलना में छत्तीसगढ़ी में कर्मकर्तृवाच्य वाले वाक्यों का प्रयोग प्रचुरता से होता है -

लइका मन फेंका गिन।

भात चुरत हे।

चोर ह पकड़ाइस।

5. क्रियाविशेषण -

छत्तीसगढ़ी में क्रियाविशेषणों के अंतर्गत निम्नांकित प्रकार व्यवहृत होते हैं :-

(क) रीतिवाचक	- ऐसे, वैसे, जैसे, तैसे, आदि
(ख) कालवाचक	- अब्भिच, तभे, तुरते, आदि
(ग) दिशावाचक	- एती, ओती, केती, जेती, तेती, आदि
(घ) स्थानवाचक	- अंते, उपर, आगू, खाल्हे, पाछू, बाहिर, भितर
(ङ) पूर्वकालिक	- '-के' प्रत्यययुक्त कृदंत, यथा- खा के, सुत के
(च) स्वीकृतिबोधक	- हाँ, हहौ, हाहौ, हौ, हूँ

6. समुच्चयबोधक अव्यय -

संयोजक	- अउ, अउर
वियोजक	- कि, ते
विरोधदर्शक	- फेर, लेकिन
परिणतिवाचक	- तो, ते, ते पाय के, धन,
आश्रयसूचक	- जे, काबर कि, जानो, मानो, जाना-माना

7. विस्यमादिबोधक अव्यय -

छत्तीसगढ़ी में विस्मयादिबोधक अव्यय के रूप में विस्मय, हर्ष, घृणा, प्रशंसा, आदि के सूचक निम्नांकित शब्द हैं : -

विस्मय	- आँय, राम-राम, ए ददा, ए दाई, अरे, हे, आदि
घृणा	- दुर-दुर, छी, छि-छि, थू, हत, आदि
हर्ष/प्रशंसा	- वा, बने, धन-धन, सुग्घर, आदि
पीड़ा	- हाय, हा दाई/ददा, दाई/ददा ओ

संभावनाएँ -

जिस पुण्यभूमि में आदिकवि वाल्मीकि की 'रामायण' की रचना हुई हो, उस की साहित्यिक परंपरा की सुदीर्घता का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। वर्तमान में छत्तीसगढ़ी साहित्य साधकों में जो उत्साह-उमंग और निष्ठा-लगन है, उससे छत्तीसगढ़ी भाषा की अपार संभावनाओं का संकेत मिलता है, क्योंकि एक बहुत बड़े भू भाग में संपर्क -भाषा के रूप में कार्य करते हुए छत्तीसगढ़ी अनेक शब्दों, रूपों, एवं प्रयोगों के संदर्भ में उदारता बरतती रही है। फलस्वरूप इस में हिंदी, अँगरेज़ी, अरबी, फ़ारसी, मराठी, उड़िया, आदि अनेक भाषाओं के शब्दों का अनुकूलित आदान हुआ है। यही छत्तीसगढ़ी का लचीलापन एवं जीवंतता है, क्योंकि जब तक व्याकरण आहत नहीं होता, तब तक भाषा को कोई ख़तरा नहीं है। आदरार्थक सर्वनाम के छत्तीसगढ़ी 'तुमन /तूँ' के स्थान पर हिंदी 'आप' तथा 'ले' के स्थान पर हिंदी 'से' परसर्ग का प्रयोग इसी विकास के प्रमाण हैं। क्रियार्थक संज्ञा, यथा- 'जवइ', 'खवइ' के स्थान पर 'जाना, खाना', आदि भी हिंदी के प्रभाव से आए हैं ।

छत्तीसगढ़ी के सम्यक् विकास के लिए यह आवश्यक है कि हम छत्तीसगढ़ी बोलते, लिखते, पढ़ते समय किंचित् भी न तो हिचकें और न ही कुंठित हों, क्योंकि भाषा प्रयोग से ही समृद्ध होती है और मानव-समाज को भी समृद्ध करती है। रामेश्वर वैष्णव ने ठीक ही कहा है -"छत्तीसगढ़ी मा लिखहू पढ़हू /अउ गोठियाहू तब्भे बड़हू" *(छत्तीसगढ़ महतारी महिमा 63)*। यह कथन भारतेन्दु हरिशचंद्र की प्रसिद्ध उक्ति - "निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल"। रमेश चंद्र महरोत्रा की यह सूक्ति भी उल्लेखनीय है - "मातृभाषा

से अच्छी कोई अन्य भाषा नहीं होती''।

यह सोचना कि छत्तीसगढ़ी में लिखने से हम छत्तीसगढ़ तक क़ैद हो कर रह जाएँगे, मात्र मानसिक विकृति है। इस दृष्टि से हम लोगों से वे अँगरेज़ अच्छे थे, जिन्होंने छत्तीसगढ़ी लोकसाहित्य और भाषा का सर्वेक्षण एवं संग्रह कर के अग्रणी भूमिका निभाई। क्षेत्र-विशेष की भाषा में जो अभिव्यक्ति-क्षमता होती है, उस का किसी अन्य भाषा में अनुवाद हो ही नहीं सकता। इसका तात्पर्य यह कदापि नहीं है कि हम छत्तीसगढ़ी के अलावा अन्य कोई भाषा न जानें या न पढ़ें। हमें जितनी अधिक भाषाएँ आती हैं, उतनी ही अधिक हम अपनी भाषा को जानने में सक्षम होते हैं, क्योंकि भाषा एक दृष्टि है - अंतर्दृष्टि।

संदर्भ

कांति कुमार जैन (1969) - छत्तीसगढ़ी बोली : व्याकरण और कोश, दिल्ली

चित्त रंजन कर (1993) - छत्तीसगढ़ी की व्याकरणिक कोटियाँ (संपादित), बिलासपुर

--------- (1999) - 'छत्तीसगढ़ी पर हिंदी का प्रभाव', छत्तीसगढ़ की अस्मिता, संपादक-केशरीलाल वर्मा, रायपुर

नरेंद्र देव वर्मा (1979) - छत्तीसगढ़ी भाषा का उद्‌विकास, इलाहाबाद

प्यारेलाल गुप्त (1973) - प्राचीन छत्तीसगढ़, रायपुर

भालचंद्रराव तैलंग (1966) - छत्तीसगढ़ी, हलबी, भतरी बोलियों का भाषावैज्ञानिक अध्ययन, बंबई

रमेश चंद्र महरोत्रा - हिंदी की पूर्वी बोलियाँ - छत्तीसगढ़ी (प्रकाश्य), हरियाणा साहित्य अकादमी, चंडीगढ़

रमेश चंद्र महरोत्रा एवं चित्त रंजन कर (1986) - हिंदी का नवीनतम बीज-व्याकरण, रायपुर

रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव (1994) - हिंदी भाषा का समाजशास्त्र, नई दिल्ली

रामानुज शर्मा (1994) - छत्तीसगढ़ी क्रियाओं की व्याकरणिकता (पी-एच.डी. उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबंध, पं. रविशंकर शुक्ल वि.वि., रायपुर) (अप्रकाशित)

रामेश्वर वैष्णव (1999) - छत्तीसगढ़ महतारी महिमा, रायपुर

व्यासनारायण दुबे (1984) - छत्तीसगढ़ी के क्षेत्रीय एवं वर्गगत प्रभेदों के वाचकों की भाषावैज्ञानिक प्रस्थापना (पी-एच.डी. उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबंध, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर) (अप्रकाशित)

शंकर शेष (1973) - छत्तीसगढ़ी का भाषाशास्त्रीय अध्ययन, भोपाल

छत्तीसगढ़ी भाषा : स्वरूप और संभावनाएँ

- डॉ. चित्त रंजन कर एवं डॉ. सुधीर शर्मा

मूल्य	**:**	**10 रु.**
प्रकाशन वर्ष	**:**	**2000**
प्रकाशक	**:**	**वैभव प्रकाशन, रायपुर (छत्तीसगढ़)**
कंपोजिंग-डिजाइनिंग एवं मुद्रण-व्यवस्था	**:**	**वैभव कंप्यूटर्स एवं पब्लिशर्स, रायपुर-10, दूरभाष : 536144**

● डॉ. चित्त रंजन कर

जन्म- 16.7.1948, पैकिन (सराईपाली) ,म.प्र.

शिक्षा - ॲम.ए. (हिंदी, भाषाविज्ञान, अँगरेज़ी); बी.एड.; पी-ॲच.डी. (भाषाविज्ञान); डी.लिट्. (भाषाविज्ञान)

पद - रीडर, भाषाविज्ञान एवं भाषा-अध्ययनशाला, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर

प्रकाशन -

पुस्तकें : भाषाविज्ञान -8, साहित्य-समीक्षा/संपादन- 10

शोधपत्र : 38

समीक्षाएँ : 05

शोध-पत्रिका : 01

प्रसारण : आकाशवाणी एवं दूरदर्शन से वार्ताएँ, साक्षात्कार,गीत, चिंतन, नियमित रूप से प्रसारित.

शोध-निर्देशन : पी-एच.डी. - 10, ॲम. फ़िल. - 48

विशेष :
1. अनुवाद हिंदी-अँगरेज़ी, अँगरेज़ी-हिंदी, उड़िया-हिंदी,
2. छत्तीसगढ़ी-गीत, हिंदी-बालगीत, एवं समकालीन हिंदी-कविताएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित.

आवास : सिद्धेश्वरी मंदिर के पीछे, सिद्धेश्वरी नगर, कोटा, रायपुर 492010, दूरभाष (0771) 326387.

● डॉ. सुधीर शर्मा

जन्म : 26 दिसंबर, 1964, रायपुर

शिक्षा : ॲम.ए. (भाषाविज्ञान, हिंदी), ॲम.फ़िल (भाषाविज्ञान), पी-ॲच.डी. भाषाविज्ञान (हिंदी विज्ञापन-रचना), डिप्लोमा इन ट्रांसलेशन, डिप्लोमा इन कंप्यूटर साइंस (डी.टी.पी.)

प्रकाशन : छत्तीसगढ़ का सांस्कृतिक पुरावैभव (लेखन एवं संपादन), सौ से अधिक लेख एवं समीक्षाएँ, आदि क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित.

सह-लेखन : छत्तीसगढ़ी में व्याकरणिक कोटियाँ, छत्तीसगढ़ दर्शन, आदि.

संपादन : राष्ट्रीय स्तर की शोधपत्रिका संप्रेषण का सह-संपादक एवं शोध-प्रकल्प का संपादन. छत्तीसगढ़ी लोकाक्षर का सह-संपादन.

संप्रति : प्रभारी, विश्वविद्यालय मुद्रणालय, पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (म.प्र.)

आवास : एच-10, विश्वविद्यालय परिसर, पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (म.प्र.) दूरभाष :(0771) 536144